ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 126-130**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानियों से तिलक का सम्बन्ध

डॉ0 आलोक कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर– इतिहास विभाग, गोचर महाविद्यालय, रामपुर मनिहारन, सहारनपुर (उ0प्र0) भारत

Received-19.04.2025, Revised-26.04.2025, Accepted-02.05.2025 **E-mail : aloketah383@gmail.com**

सारांशः लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के स्वदेशी, बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा, स्वराज्य, स्वशासन, डोमेनियन स्टेटस, अस्पृश्यता, अहिंसा, प्रेस की स्वतन्त्रता, धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक मूल्यों का महत्व आदि विचारों का भारतीय जनमानस पर व्यापक असर हुआ। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानी भी इससे अछूते न रह सके। राष्ट्रीय शिक्षा के प्रचार और प्रसार का कार्य पश्चिमी उत्तर प्रदेश में व्यापक रूप से चल रहा था। इसी क्रम में गुरूकुल कांगड़ी, हरिद्वार, प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन, जामिया मिलिया विश्वविद्यालय, जिसकी स्थापना मोहम्मद अली जौहर ने अलीगढ़ में की थी, जो बाद में दिल्ली लाया गया, देवबंद की दारूल उलूम जैसी संस्थाओं की स्थापना हुई। अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराई का विरोध प्रारम्भ हुआ। किसानों, मजदूरों की समस्याओं को लेकर आन्दोलन हुए। स्वदेशी एवं बहिष्कार का प्रभाव परवर्ती काल में गाँधीवादी आन्दोलनों में भी दिखाई पड़ता है। स्वदेशी और बहिष्कार का प्रयोग गाँधी जी ने अपने आन्दोलनों में बखूबी किया।

कुंजीभूत शब्द– स्वदेशी, बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा, स्वराज्य, स्वशासन, डोमेनियन स्टेटस, अस्पृश्यता, अहिंसा, धार्मिक, सांस्कृतिक,

भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन को लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने एक नई दिशा प्रदान की। तिलक के स्वराज्य, स्वदेशी, बहिष्कार, स्वशासन, राष्ट्रीय शिक्षा, प्रेस की स्वतन्त्रता, अस्पृश्यता, अहिंसा सामाजिक मूल्यों का महत्व जैसे विचारों ने भारतीय जनमानस को जागृत किया। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानी भी तिलक के विचारों से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित हुए तथा उन्होंने भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन के महत्वपूर्ण योगदान दिया।

चन्द्रभानु गुप्त भारत के प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी और उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री थे। उन पर 'आर्य समाज' का बहुत गहरा प्रभाव था। वर्ष 1926 से ही सी.बी. गुप्त 'उत्तर प्रदेश कांग्रेस' और 'अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी' के सदस्य बन गये थे। कई विभागों में मन्त्री रहने के बाद चन्द्रभानु जी वर्ष 1960 से 1963 तक उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री रहे। उन्होंने समाज सेवा के क्षेत्र में भी अनेक काम किये। लखनऊ और गोरखपुर जैसे शहरों को आधुनिक व विकासशील बनाने की पहल करने वाले सी.बी गुप्त को लोग मजबूत प्रशासन, जुझारू नेतृत्व व बड़प्पन के लिए आज भी याद करते हैं।

चन्द्रभानु गुप्त के पिता का नाम हीरालाल था। उन्हें समाज में बहुत ही मान–सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त थी। चन्द्रभानु गुप्त के चरित्र निर्माण में 'आर्य समाज' का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और भावी जीवन में आर्य समाज के सिद्धान्त उनके मार्गदर्शक रहे। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा लखीमपुर खीरी में हुई।

बाद में वे उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए लखनऊ चले आये। यहाँ 'लखनऊ विश्वविद्यालय' से एम.ए. और एलएल. बी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद नवाबों का शहर तखनऊ ही उनका कार्यक्षेत्र बन गया।

शिक्षा पूर्ण करने के बाद गुप्त जी ने लखनऊ में वकालत आरम्भ की। लगभग पाँच फुट और चार इंच के कद वाले वाले चन्द्रभानु, जो कि एक पढ़ाकू युवक थे, उनका राजनीति से कोई लेना–देना नहीं था। लेकिन वह महात्मा गाँधी के विभिन्न आन्दोलनों से प्रेरित जरूर थे। 1916 में घर वालों की मर्जी के बिना पाँच रुपये जेब में डालकर वे लखनऊ में हुए कांग्रेस के एक जलसे में हिस्सा लेने पहुँच गये थे। उस समय लोकमान्य तिलक का जुलूस कैसरबाग होते हुए चारबाग की तरफ आ रहा था। बाँसमण्डी चौराहे पर सी.बी. गुप्त को लोकमान्य तिलक के पैर छूने का मौका मिला। पैर छूते उन्हें न जाने कैसी प्रेरणा मिली कि उनके कदम सक्रिय राजनीति की ओर बढ़ चले। फिर तो राजनीति और समाज सेवा में ऐसी पैठ बनायी कि 1960 के दिसम्बर में उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री बन गये।[1]

अपने जुझारूपन और खरी बात बोलने के कारण सी.बी. गुप्त युवा राजनीति में तेजी से उभरे। वर्ष 1919 में 'रौलट एक्ट' के विरोध में प्रदर्शन करने के बाद कांग्रेसजन चन्द्रभानु जी की क्षमताओं के कायल हो गये। 'काकोरी रेल काण्ड' के क्रान्तिकारियों के बचाव पक्ष में वकालत करने के बाद तो वह सुर्खियों में आ गये। कांग्रेस को एक ऐसे ही तेजतर्रार युवा की जरूरत थी। चन्द्रभानु गुप्त को 1928 में लखनऊ शहर कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया गया। कानपुर में हुए कांग्रेस के राष्ट्रीय अधिवेशन में लखनऊ से डेलीगेट भी चुने गये। पूरे राष्ट्रीय आन्दोलन में उन्होंने सक्रिय सिपाही की भूमिका निभाई।

सूफी अम्बा प्रसाद भारत के प्रसिद्ध राष्ट्रवादी नेता, महान क्रान्तिकारी और स्वतन्त्रता सेनानी थे। इनकी क्रान्तिकारी गतिविधियों के कारण ब्रिटिश सरकार ने इन्हें वर्ष 1897 और 1907 में फाँसी की सजा सुनाई थी। किन्तु दोनों ही बार फाँसी से बचने के लिए सूफी अम्बा प्रसाद ईरान भाग गये। ईरान में ये 'गदर पार्टी' के अग्रणी नेता थे। ये अपने सम्पूर्ण जीवन काल में वामपन्थी रहे। सूफी अम्बा प्रसाद का मकबरा ईरान के शीराज शहर में बना हुआ है।

सूफी अम्बा प्रसाद जी का जन्म 1858 ई. में उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद में हुआ था। इनका एक हाथ जन्म से ही कटा हुआ था। जब ये बड़े हुए, तब इनसे किसी ने पूछा कि, 'आपका एक हाथ कटा हुआ क्यों है?' इस पर उन्होंने जवाब दिया कि, ष्वर्ष 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम में मैंने अंग्रेजों से जमकर युद्ध किया था। उसी युद्ध में हमारा हाथ कट गया। अब मेरा पुनर्जन्म हुआ है, लेकिन हाथ ठीक नहीं हुआ है।' सूफी अम्बा प्रसाद ने मुरादाबाद तथा जालन्धर में अपनी शिक्षा ग्रहण की थी।

सूफी अम्बा प्रसाद अपने समय के बड़े अच्छे लेखक थे। वे उर्दू में एक पत्र भी निकालते थे। दो बार अंग्रेजों के विरुद्ध बड़े कड़े लेख उन्होंने लिखे। इसके फलस्वरूप उन पर दो बार मुकदमा चलाया गया। प्रथम बार उन्हें चार महीने की और दूसरी बार नौ वर्ष की कठोर सजा दी गयीं उनकी सारी सम्पत्ति भी अंग्रेज सरकार द्वारा जब्त कर ली गयीं सूफी अम्बा प्रसाद कारागार से लौटकर आने के बाद हैदराबाद चले गये। कुछ दिनों तक हैदराबाद में ही रहे और फिर वहाँ से लाहौर चले गये।

लाहौर पहुँचने पर सूफी अम्बा प्रसाद सरदार अजीत सिंह की संस्था 'भारत माता सोसायटी' में काम करने लगे। सिंह जी के नजदीकी सहयोगी होने के साथ ही सूफी अम्बा प्रसाद लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के भी अनुयायी बन गये थे।[2] इन्हीं दिनों उन्होंने एक पुस्तक लिखी, जिसका नाम विद्रोही ईसा था। उनकी यह पुस्तक अंग्रेज सरकार द्वारा बड़ी आपत्तिजनक समझी गयीं इसके

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

फलस्वरूप सरकार ने उन्हें गिरफ्तार करने का प्रयत्न किया। सूफी जी गिरफ्तारी से बचने के लिए नेपाल चले गये। लेकिन वहाँ पर वे पकड़ लिए गये और भारत लाये गये। लाहौर में उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया, किन्तु कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलने के कारण उन्हें छोड़ दिया गया।

सूफी अम्बा प्रसाद फारसी भाषा के प्रकाण्ड विद्वान थे वर्ष 1906 ई. में जब सरदार अजीत सिंह को बन्दी बनाकर देश निकाले की सजा दी गयी तो सूफी अम्बा प्रसाद के पीछे भी अंग्रेज पुलिस पड़ गयीं अपने कई साथियों के साथ सूफी जी पहाड़ों पर चले गये। कई वर्षों तक वे इधर–उधर घूमते रहे। जब पुलिस ने घेराबन्दी बन्द कर दी तो सूफी अम्बा प्रसाद फिर लाहौर जा पहुँचे। लाहौर से उन्होंने एक पत्र निकला, जिसका नाम 'पेशवा' था। सूफी जी छत्रपति शिवाजी के अनन्य भक्त थे। उन्होंने 'पेशवा' में शिवाजी पर कई लेख लिखे, जो बड़े आपत्तिजनक समझे गये।[3] इस कारण उनकी गिरफ्तारी की खबरें फिर उड़ने लगीं। सूफी जी पुनः गुप्त रूप से लाहौर छोड़कर ईरान की ओर चल दिये। वे बड़ी कठिनाई से अंग्रेजों की दृष्टि से बचते हुए ईरान जा पहुँचे।

ईरानी क्रान्तिकारियों के साथ मिलकर सूफी अम्बा प्रसाद ने आम आन्दोलन किये। वे अपने सम्पूर्ण जीवन में वामपन्थी रहे। 12 फ़रवरी, 1919 में ईरान निर्वासन् में ही वे मृत्यु को प्राप्त हुए।

गेंदालाल दीक्षित भारत के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी थे। वह 'बंगाल विभाजन' के विरोध में चल रहे जन आन्दोलन से बहुत प्रभावित हुए थे। उन्होंने क्रान्ति के लिए 'शिवाजी समिति' की स्थापना की थी। इसके बाद शिक्षित लोगों का एक संगठन बनाया और उन्हें अस्त्रों–शस्त्रों की शिक्षा प्रदान की।

पण्डित गेंदालाल दीक्षित का जन्म 30 नवम्बर सन् 1888 को जिला आगरा, उत्तर प्रदेश की तहसील बाह के मई नामक गाँव में हुआ था। उनके पिता का नाम पण्डित भोलानाथ दीक्षित था। गेंदालाल दीक्षित की आयु मुश्किल से 3 वर्ष की रही होगी कि माता का निधन हो गया। बिना माँ के बच्चे का जो हाल होता है, वही इनका भी हुआ। हमउम्र बच्चों के साथ निरंकुश खेलते–कूदते कब बचपन बीत गया, पता ही न चला; परन्तु एक बात अवश्य हुई कि बालक के अन्दर प्राकृतिक रूप से अप्रतिम वीरता का भाव प्रगाढ़ होता चला गया। गाँव के विद्यालय से हिन्दी में प्राइमरी परीक्षा पास कर इटावा से मिडिल और आगरा से मैट्रिकुलेशन किया। आगे पढने की इच्छा तो सारन्तु परिस्थितिवश उत्तर प्रदेश में औरैया जिले की डीएवी पाठशाला में अध्यापक हो गये।

सन् 1905 में बंगाल विभाजन के बाद जो देशव्यापी 'स्वदेशी आन्दोलन' चला, उससे वे अत्यधिक प्रभावित हुए। उन्होंने 'शिवाजी समिति' के नाम से डाकुओं का एक संगठन बनाया और शिवाजी की भांति छापामार युद्ध करके अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध उत्तर प्रदेश में एक अभियान प्रारम्भ किया; किन्तु दल के ही एक सदस्य दलपतसिंह की मुखबिरी के कारण गिरफ्तार करके गेंदालाल दीक्षित को पहले ग्वालियर लाया गया, फिर वहाँ से आगरा के किले में कैद करके सेना की निगरानी में रख दिया गया। आगरा किले में रामप्रसाद बिस्मिल ने आकर गुप्त रूप से मुलाकात की और संस्कृत में सारा वार्तालाप किया, जिसे अंग्रेज पहरेदार बिलकुल न समझ पाये। अगले दिन गेंदालाल दीक्षित ने योजनानुसार पुलिस गुप्तचरों से कुछ रहस्य की बातें बतलाने की इच्छा जाहिर की। अधिकारियों की अनुमति लेकर उन्हें आगरा से मैनपुरी भेज दिया गया, जहाँ बिस्मिल की संस्था 'मातृवेदी' के कुछ साथी नवयुवक पहले से ही हवालात में बन्द थे।

गेंदालाल दीक्षित भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के अप्रतिम योद्धा, महान क्रान्तिकारी व उत्कट राष्ट्रभक्त थे, जिन्होंने आम आदमी की बात तो दूर, डाकुओं तक को संगठित करके ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध खड़ा करने का दुस्साहस किया। दीक्षित जी 'उत्तर भारत के क्रान्तिकारियों के द्रोणाचार्य' कहे जाते थे।[4] उन्हें 'मैनपुरी षड्यंत्र' का सूत्रधार समझ कर पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया और बाकायदा चार्जशीट तैयार की गयी और मैनपुरी के मैजिस्ट्रेट बी. एस. क्रिस की अदालत में गेंदालाल दीक्षित सहित सभी नवयुवकों पर सम्राट के विरुद्ध साजिश रचने का मुकदमा दायर करके मैनपुरी की जेल में डाल दिया गया। इस मुकदमे को भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास में 'मैनपुरी षड्यंत्र केस' के नाम से जाना जाता है।

रामप्रसाद बिस्मिल भारत के महान स्वतन्त्रता सेनानी ही नहीं, बल्कि उच्च कोटि के कवि, शायर, अनुवादक, बहुभाषाविद् व साहित्यकार भी थे जिन्होंने भारत की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी।

पण्डित रामप्रसाद बिस्मिल किसी परिचय के मोहताज नहीं। उनके लिखे 'सरफरोशी की तमन्ना' जैसे अमर गीत ने हर भारतीय के दिल में जगह बनायी और अंग्रेजों से भारत की आजादी के लिए वो चिंगारी छेड़ी जिसने ज्वाला का रूप लेकर ब्रिटिश शासन् के भवन को लाक्षागृह में परिवर्तित कर दिया। ब्रिटिश साम्राज्य को दहला देने वाले काकोरी काण्ड को रामप्रसाद बिस्मिल ने ही अंजाम दिया था।

ज्येष्ठ शुक्ल 11 संवत् 1954 सन् 1897 में पण्डित मुरलीधर की धर्मपत्नी ने द्वितीय पुत्र को जन्म दिया। इस पुत्र का जन्म मैनपुरी में हुआ था। सम्भवतः वहाँ बालक का ननिहाल रहा हो। इस विषय में श्री व्यथित हृदय ने लिखा हैः

यहाँ यह बात बड़े आश्चर्य की मालूम होती है कि बिस्मिल के दादा और पिता ग्वालियर के निवासी थे। फिर भी उनका जन्म मैनपुरी में क्यों हुआ? हो सकता है कि मैनपुरी में बिस्मिल जी का ननिहाल रहा हो।' इस पुत्र से पूर्व एक पुत्र की मृत्यु हो जाने से माता–पिता का इसके प्रति चिन्तित रहना स्वाभाविक था। अतः बालक के जीवन की रक्षा के लिए जिसने जो उपाय बताया, वही किया गया। बालक को अनेक प्रकार के गण्डे ताबीज आदि भी लगाये गये। बालक जन्म से ही दुर्बल था। जन्म के एक–दो माह बाद इतना दुर्बल हो गया कि उसके बचने की आशा ही बहुत कम रह गयी थी। माता–पिता इससे अत्यन्त चिन्तित हुए। उन्हें लगा कि कहीं यह बच्चा भी पहले बच्चे की तरह ही चल न बसे। इस पर लोगों ने कहा कि सम्भवतः घर में ही कोई बच्चों का रोग प्रवेश कर गया है। इसके लिए उन्होंने उपाय सुझाया। बताया गया कि एक बिल्कुल सफेद खरगोश बालक के चारों ओर घुमाकर छोड़ दिया जाये। यदि बालक को कोई रोग होगा तो खरगोश तुरन्त मर जायेगा। माता–पिता बालक की रक्षा के लिए कुछ भी करने को तैयार थे, अतः ऐसा ही किया गया। आश्चर्य की बात कि खरगोश तुरन्त मर गया। इसके बाद बच्चे का स्वास्थ्य दिन पर दिन सुधरने लगा। यही बालक आगे चलकर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

फाँसी के एक दिन पूर्व बिस्मिल के पिता अन्तिम मुलाकात के लिए गोरखपुर आये। कदाचित् माँ का हृदय इस आघात को सहन न कर सके, ऐसा विचार कर यह बिस्मिल की माँ को साथ नहीं लाये। बिस्मिल के दल के साथी शिव वर्मा को लेकर अन्तिम बार पुत्र से मिलने जेल पहुंचे, किन्तु वहाँ पहुँचने पर उन्हें यह देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ा कि माँ वहाँ पहले ही पहुँची थीं। शिव वर्मा को क्या कहकर अन्दर ले जायें, ऐसा कुछ सोच पाते, माँ ने शिव वर्मा को चुप रहने का संकेत किया और पूछने पर बता दिया। 'मेरी बहिन का लड़का है।' सब लोग अन्दर पहुँचे, माँ को देखते ही बिस्मिल रो पड़े। उनका मातृ स्नेह आंखों से उमड़ पड़ा,

ASVP PIF-9.805 /ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14

ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

किन्तु वीर जननी माँ ने एक वीरांगना की तरह पुत्र को उत्तके कर्तव्य का बोध कराते हुए ऊँचे स्वर में कहाः "मैं तो समझती थी कि मेरा बेटा बहादुर है, जिसके नाम से अंग्रेज सरकार भी कांपती है। मुझे नहीं पता था कि वह मौत से डरता है। यदि तुम्हें रोकर ही मरना था, तो व्यर्थ इस काम में क्यों आये।"

तब बिस्मिल ने कहा, 'ये मौत के डर के आंसू नहीं हैं। यह माँ का स्नेह है। मौत से मैं नहीं डरता माँ तुम विश्वास करो।' इसके बाद माँ ने शिव वर्मा का हाथ पकड़कर आगे कर दया और कहा कि पार्टी के लिए जो भी सन्देश देना हो, इनसे कह दो। माँ के इस व्यवहार से जेल के अधिकारी भी अत्यन्त प्रभावित हुए। इसके बाद उनकी अपने पिता जी से बातें हुई, फिर सब लौट पड़े।

श्री कृष्णदत्त पालीवाल (जन्मः 1895, आगरा, उत्तर प्रदेश) एक पत्रकार और स्वतन्त्रता सेनानी थे। संविधान सभा और प्रदेश की विधानसभा की सदस्यता के साथ–साथ उन्होंने उत्तर प्रदेश सरकार में मन्त्री पद भी संभाला था।

पत्रकार और स्वतन्त्रता सेनानी श्री कृष्णदत्त पालीवाल का जन्म 1895 ई. में आगरा जिले के एक गांव में हुआ था। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. की परीक्षा पास की। वे कानून की पढ़ाई कर रहे थे कि उसी समय असहयोग आन्दोलन आरम्भ हो गया और पालीवाल उसमें सम्मिलित हो गये। अर्थशास्त्र के अध्ययन के साथ–साथ उन्होंने भारतीय धार्मिक ग्रन्थों का भी गहन अध्ययन किया था। वे लोकमान्य तिलक को अपना गुरु मानते थे।[5] स्वामी विवेकानन्द के विचारों से भी वह प्रभावित थे। बाद में गाँधी जी उनके प्रेरणा स्रोत बने रहे। पालीवाल धार्मिक संकीर्णताओं के विरोधी थे। उन्होंने स्वयं एक मुस्लिम विधवा से विवाह किया था।

पालीवाल ने पत्रकारिता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम किया था। कुछ समय गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' में काम करने के बाद उन्होंने 1925 में आगरा से 'सैनिक' नाम का साप्ताहिक पत्र निकाला। 'प्रताप' की भांति 'सैनिक' भी राष्ट्रीय आन्दोलन का ध्वजवाहक था। पालीवाल जी की लेखनी आन्दोलनों में आग उगलती थी। इसलिए अपने जीवन काल में 'सैनिक' पर प्रतिबंध लगते रहे। वह बन्द होता और निकलता रहा।

पालीवाल जी की क्रान्तिकारियों के प्रति सहानुभूति थी। वे मैनपुरी षड्यन्त्र में गिरफ्तार भी हुए थे, किन्तु अभियोग सिद्ध ना होने पर रिहा कर दिये गये। उनकी गणना उत्तर प्रदेश के चोटी के कांग्रेसजनों में होती थी। वे प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष भी रहे थे। गाँधी जी ने 1940 में उन्हें सत्याग्रह के लिए पूरे प्रदेश का 'डिक्टेटर' नियुक्त किया था। सरकार ने उनको तत्काल गिरफ्तार कर लिया और 1945 में ही वे जेल से बाहर आ सके। 1946 में वे केन्द्रीय असेंबली के सदस्य चुने गये। उन्होंने संविधान सभा और प्रदेश की विधानसभा की सदस्यता के साथ–साथ उत्तर प्रदेश की सरकार में मन्त्री पद भी संभाला था। पत्रकार और स्वतन्त्रता सेनानी श्री कृष्णदत्त पालीवाल का 1968 में देहान्त हो गया।

स्वामी श्रद्धानन्द, संयास ग्रहण करने से पूर्व मुंशीराम के नाम से जाने जाते थे। सन् 1889 से ही डी0ए0वी0 कॉलेज के पाठ्यक्रम सम्बन्धी विवाद के कारण आर्य समाज दो भागों में बँट गया। एक दल, महात्मा दल (घास पार्टी) तथा कॉलेज दल (मांस पार्टी) बनने प्रारम्भ हो गये। मुंशीराम जी व महात्मा दल का विचार था कि वेद तथा संस्कृति को प्रमुखता देने के साथ ही उपदेशक कक्षाएँ भी प्रारम्भ की जाये। वे मांस भक्षण को वेद विरूद्ध मानते थे तथा स्त्री शिक्षा प्रसार को महत्व देते थे।138 उनका यह मत था कि अंग्रेजी भाषा के स्थान पर शिक्षा हिन्दी माध्यम से होनी चाहिए और यही से गुरूकुल की स्थापना की धारणा बनी।

मुंशी जी गुरूकुल की स्थापना ऐसे स्थान पर करना चाहते थे जो हिमालय की उपात्यका में, नदी के तट पर, पूर्णतया प्राकृतिक परिवेश में हो, परन्तु शीघ्र निश्चय न हो पाने के कारण 19 मई 1900 को गुँजरावाला (पाकिस्तान) में गुरूकुल की स्थापना की गयी। निरन्तर खोज के उपरान्त गंगा के किनारे काँगड़ी गाँव उन्हें मिला जिसके भूस्वामी मुंशी अमन सिंह ने 1400 बीघे भूमि अपनी कुल सम्पत्ति आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब को दान में दे दी।[7]

सन्यास ग्रहण करने के पश्चात् स्वामी जी ने गुरूकुल छोड़ दिया और दिल्ली जाकर सर्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष के रूप में नया बाजार दिल्ली स्थित सर्वदेशिक भवन में ठहरे। स्वामी जी गुरूकुल के अधिष्ठाता पद से मुक्त होकर, भारत की स्वाधीनता के लिए विदेशी सरकार का विरोध करने लगे। उनका विश्वास था कि "माँगने से स्वराज्य नहीं मिलता है। स्वराज तब मिलेगा जब भारतवासी उसके योग्य हो जायेंगे।"[8]

श्री बी0 आर0 बोमनजी का पूरा बोमनजी रूस्तमजी था। वे 1906 से 1936 तक (मृत्यु पर्यत्न) सहारनपुर में रहते थे। बोमन जी बार–एट लॉ थे। सहारनपुर में वकालत करते थे। उत्तर प्रदेश में 23 जून 1917 को होमरूल आन्दोलन के संचालन के लिए जब समिति का गठन हुआ, उसमें पं० मोतीलाल नेहरू उत्तर प्रदेश के अध्यक्ष और बी0 आर0 बोमन जी मंत्री बने। सहारनपुर में बोमन जी के नेतृत्व में होमरूल लीग का कार्यक्रम चलता रहा। लालता प्रसाद 'अख्तर' उनके सक्रिय साथी थे।[9]

सहारनपुर में खिलाफत आन्दोलन का संचालन बोमन जी कर रहे थे, उन्हीं के नेतृत्व में जुबली पार्क में एक आम सभा हुई जिसमें लगभग 6000 लोग उपस्थित थे।142 12 अप्रैल 1919 को लाल शादीराम और पं0 ब्रजभूषण ने बोमनजी से परामर्श किया, आन्दोलनों का बहिष्कार करने और हड़ताल करने की घोषणा की।[10] 4 दिसम्बर 1919 को सहारनपुर में कांग्रेस का प्रान्तीय सम्मेलन हुआ। बी0 आर0 बोमनजी सम्मेलन स्वागत समिति के अध्यक्ष के थे। श्री जवाहरलाल नेहरू ने भी इस सम्मेलन में भाग लिया था। वे बोमनजी के साथ ठहरे थे।[11]

असहयोग आन्दोलन समाप्त हो जाने के बाद 1923 में जब उत्तर प्रदेश नगर पालिका अधिनियम में संशोधन (1812–1923) कर अध्यक्ष का पद जनप्रतिनिधियों को दे दिया गया तो बी0 आर0 बोमनजी सहारनपुर के पहले नागरिक थे जिन्हे सहारनपुर नगरपालिका का प्रथम अध्यख निर्वाचित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।[12] श्री बोमन जी 1 अप्रैल 1923 से 1928 तक नगरपालिका के अध्यक्ष रहे।[13] उनके पदमुक्त होने के पश्चात् 1929 में सहारनपुर नगरपालिका ने पुल जोगियान से पुल खुमरान तक की सड़क का नाम 'बोमन जी रोड़' रखा।

श्री ललिता प्रसाद अख्तर का जन्म सन् 1900 में अम्बाला जिले के गुलाम गाँव में हुआ था। उनके पिताजी आकर हकीम का काम करने लगे। सहारनपुर में मुस्लिम धर्म और संस्कृति का बोलबाला था, अतः हिन्दुओं को संगठित और जागृत करने के लिए आपने हिन्दु कुमार सभा का गठन किया। हिन्दु कुमार सभा ने हिन्दु नवयुवकों को सशक्त और शक्तिशाली बनाने के लिए सामूहिक रूप से व्यायाम करना, लाठी चलाना आदि सीखाने के लिए फुलवारी आश्रम बनाया और उसी में एक अखाड़ा स्थापित किया। इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय घटना है कि सहारनपुर के पास सकरोढ़ा गाँव के साधारण नागरिक पं0 रामनारायण जी की पत्नी रामप्यारी को गुण्डे उठाकर ले गये। पुलिस तथा गाँव के लोगों ने इस विपत्ति में रामनारायण जी की कोई सहायता नहीं की। इस घटना का जब अख्तर जी को पता चला तो उन्होंने अपने साथी गिरिवर सिंह के साथ उस मकान में घुस जहाँ महिला को रखा गया था और उसे

ASVP PIF-9.805 /ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

जबरदस्ती मुक्त करवा लाये। इस घटना से ललिता प्रसाद अख्तर और हिन्दु कुमार सभा का दबदबा कायम को गया। उनकी प्रेरणा से ही 18 जून 1921 को रामलीला भवन में नगर के गणमान्य व्यक्तियों के परामर्श से तिलक लाइब्रेरी के निर्माण का निश्चय किया गया। यह लाइब्रेरी आज भी चल रही है। उनके कार्यों में एक उल्लेखनीय कार्य था श्रावणी पूर्णिमा के अवसर पर 'तिलक रक्षाबन्धन मेला' आरम्भ करना। इस कार्य में उन्हें श्री रतन लाल चातक जी का सहयोग प्राप्त हुआ। अख्तर जी के जीवन की एक और प्रमुख घटना का उल्लेख करना उचित होगा, एक बार उन्हें तीन वर्ष की एक हरिजन बालिका नाले में पड़ी मिली। उसके फोड़े–फुंसी से गले शरीर का इलाज करवाकर अख्तर जी ने उसका पालन–पोषण किया। विवाह योग्य आयु प्राप्त करने पर उसका विवाह उसी की जाति के युवक से करवा दिया। इस प्रकार जाति–पाति के बंधनों से ऊपर उठकर मानव को मानव मानने का उपदेश ना देकर अपने व्यवहार से अख्तर जी ने चरितार्थ किया।

1917 से ललिताप्रसाद जी का राजनैतिक जीवन प्रारम्भ होता है। यह वह समय था जब भारत मैं 'होमरूल आन्दोलन' चल रहा था। पण्डित, मोतीलाल नेहरू 23 जून, 1917 को 'उत्तर प्रदेश होमरूल कमेटी' के अध्यक्ष और सहारनपुर के पारसी बैरिस्टर बोमनजी इसे मंत्री चुने गये। इन्हीं बोमन जी के नेतृत्व में सहारनपुर में होमरूल आन्दोलन चला। अख्तर और उनके साथियों ने इसमें सक्रिय भाग लिया।[14] 1920 से 1922 तक असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ होने पर सहारनपुर में भी असहयोग आन्दोलन को सुचारू रूप से चलाने के लिए एक कांग्रेस कमेटी गठित की गयी थी, जिसके मंत्री ललिता प्रसाद अख्तर थे। उन्होंने कांग्रेस सेवादल का गठन भी किया था।

बाबू मेलाराम जी का जन्म 1887 में अमृतसर में हुआ था।[15] सहारनपुर में उन्होंने 1915 में वकालत शुरू की थी। सहारनपुर में पदार्पण करते ही राजनैतिक जागृति में जुट गये। उस समय के प्रसिद्ध बैरिस्टर बी0 आर0 बोमनजी और कांग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ता सोमप्रकाश वकील उनके निकट के सहयोगी थे। जब बोमन जी के नेतृत्व में होमरूल लीग का गठन हुआ था। बाबू मेलाराम होमरूल लीग और कांग्रेस कमेटी दोनों के अध्यक्ष थे।[16] गाँधी जी द्वारा रॉलट एक्ट के विरोध में जब 1919 में आन्दोलन प्रारम्भ किया गया तो कांग्रेस ने 6 अप्रैल 1919 को रॉलट एक्ट के विरोध में प्रस्ताव पारित किया गया। याहर की दुकाने एवं व्यापारिक संस्थान बंद रहे।[17]

1912 में पं० मदनमोहन मालवीय सहारनपुर कार्य और 1916 में गाँधीजी भी आये। वे दोनों बाबू मेलाराम वकील के यहाँ ठहरे। दोनों ने सहारनपुर के जैन अस्पताल का निरीक्षण किया।[18] वैध रामनाथ का जन्म 1888 में सरसावा में पंडित प्रभुदयाल के घर हुआ था। प्रारम्भ में डाकखाने में नौकरी की, फिर आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त कर वैध बन गये। बाबू मेलाराम के सम्पर्क में आने के पश्चात् 1918 में कांग्रेस में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया।[19]

1920 में खिलाफत और असहयोग आन्दोलन में भाग लिया उन्होंने जमींदारों, अंग्रेजों तथा सामाजिक बुराइयों के विरूद्ध संघर्ष किया। अभी रूचि अछूतोद्वार, शिक्षा के प्रसार जैसे संरचनात्मक कार्यों में ली।

सर सीताराम का जन्म 14 जनवरी, 1883 में मेरठ में हुआ था। उनकी माता का नाम चम्पा देवी तथा पिता का नाम श्री जुगल किशोर था।[20] इनके पुत्र अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त इतिहासकार सतीश चन्द्र है। 1905 में सीताराम इंडियन नेशनल कांग्रेस से जुड़े गये। 1905 में कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में भाग लिया तथा वहाँ से वापस लौटने पर कांग्रेस के विचारों को जनता में फैलाने के कार्य में लग गये।

राजा रघुबीर नरायण सिंह का जन्म 23 मइ 1872 में मेरठ के असौडा में हुआ था। 1905 में रघुबीर नरायण कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में शामिल हुए। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान इन्होंने कई बार फण्डों में चन्दा देकर सम्राट की सहायता की। अंग्रेजों ने उन्हें राय साहब की उपाधि दी। जलियाँवाला बाग घटना से अंग्रेजों पर से इनका विश्वास उठ गया और वे गाँधी जी के बताये मार्ग पर चलने लगे। इनके खिलाफ राजद्रोह का मुकदमा दर्ज किया गया। चौधरी रघुबीर नरायण ने मेरठ ने राष्ट्रीय स्कूल स्थापित करने के लिए 700 रूपये दान में दिये थे।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के राष्ट्रीय कार्यकर्ता एवं स्वतन्त्रता सेनानी विष्णु शरण दुबलिश का जन्म 2 अक्टूबर, 1899 ईसवी को मेरठ जिले के मखाना गाँव में एक आर्यसमाजी परिवार में हुआ था। उनकी शिक्षा मेरठ में हुई। बी.ए. की पढ़ाई कर रहे थे तभी गाँधीजी के असहयोग आन्दोलन में शामिल हो गये और गिरफ्तार कर लिए गये। बाद में जेल से बाहर आने पर उन्होंने बी.ए. की शिक्षा पूरी की। जेल में रहते समय दुबलिश का सम्पर्क क्रान्तिकारी साहित्य से हुआ और उनके विचारों में यह परिवर्तन आया कि स्वराज प्राप्ति के लिए गाँधीजी के अहिंसा के मार्ग के स्थान पर सशस्त्र क्रान्ति का मार्ग अधिक कारगर है।

क्रान्तिकारी साहित्य और प्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्र नाथ सान्याल के सम्पर्क में आने से विष्णु शरण दुबलिश क्रान्तिकारी विचारों के व्यक्ति बन गये। वे हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी के सदस्य बन गये। इस क्रान्तिकारी दल में शीघ्र ही उनका महत्वपूर्ण स्थान बन गया। बताया जाता है कि 1925 की प्रसिद्ध काकोरी काण्ड की योजना को इन्हीं के घर पर अन्तिम रूप दिया गया था।

काकोरी काण्ड के बाद 1925 में वे गिरफ्तार हुए और मुकदमे में 10 वर्ष की कठोर कारावास की सजा मिली। जेल में अधिकारियों के साथ संघर्ष हो जाने के कारण दुबलिश को आजन्म कैद की सजा देकर अंडमान भेज दिया। प्रदेशों में कांग्रेस की सरकारें बन जाने पर 1 नवंबर 1937 को वे रिहा हो सके। जेल में दुबलिश के विचारों में पुनः परिवर्तन हुआ और वे कांग्रेस में सम्मिलित हो गये। उन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का सदस्य चुना गया। 1940 के व्यक्तिगत सत्याग्रह और 1942 के आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेने के कारण उन्हें फिर जेल में बन्द कर दिया गया। स्वतन्त्रता के बाद दुबलिश जी का प्रदेश के पश्चिमी जिलों में स्वदेशी और ग्राम उद्योगों को प्रोत्साहित करने में विशेष योगदान रहा है।[20] वे उत्तर प्रदेश की विधानसभा और संसद के सदस्य भी रहे।

सहारनपुर के आचार्य जुगल किशोर, जोकि विचारों एवं सिद्धान्तों में लाला लाजपत राय के निकट थे।[21] स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी, राजनीतिज्ञ और प्रसिद्ध शिक्षाविद् थे। उन्होंने अपनी शिक्षा पहले कोलकाता (भूतपूर्व कलकत्ता), नैनीताल और फिर सहारनपुर में प्राप्त की। इसके बाद आगे की शिक्षा के लिए भारत की धार्मिक नगरियों में से एक वाराणसी के 'सेंट्रल हिन्दू कॉलेज' में भर्ती हुए। 'सेंट्रल हिन्दू कॉलेज' की स्थापना से श्रीमती एनी बेसेंट का निकट का सम्बन्ध था। वे अपने कुछ प्रतिभाशाली छात्रों को उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड भेजना चाहती थीं। वहाँ उन्होंने आधुनिक इतिहास में ऑनर्स की डिग्री प्राप्त की। यूरोप के विभिन्न देशों की यात्रा का भी अवसर उन्हें मिला। जुगल किशोर योग्यता से प्रभावित होकर ही एनी बेसेंट ने उन्हें उच्च शिक्षा के लिए वर्ष 1913 में ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी भेज दिया था।[22] वापस आने पर इनकी भेंट राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी से हुई, जिन्होंने इन्हें 'गुजरात विद्यापीठ' में इतिहास

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

का अध्यापक बनाकर भेजा। जुगल किशोर जी ने 'प्रेम विद्यालय', वृन्दावन (उत्तर प्रदेश) में भी अध्यापन कार्य किया था। सन् 1930 में उनके एक भाषण पर ब्रिटिश सरकार ने उन्हें गिरफ्तार किया। इसके बाद आचार्य जुगल किशोर का पूरा जीवन स्वतन्त्रता संग्राम में ही व्यतीत हुआ।

वर्ष 1920 में भारत वापस आने पर जुगल किशोर महात्मा गाँधी से मिले। गाँधीजी ने उन्हें पहले 'गुजरात विद्यापीठ' में इतिहास का अध्यापक बनाकर भेजा, बाद में लाहौर में 'कौमी विद्यापीठ' खुला तो उसके प्रथम प्राचार्य भी वे बनाये गये। 1925 तक जुगल किशोर वहाँ रहे। फिर कुछ समय तक साबरमती आश्रम, अहमदाबाद में रहने बाद वे आचार्य कृपलानी द्वारा स्थापित 'गाँधी आश्रम' के प्रधान सचिव बनकर वाराणसी चले गये। इसके बाद उन्होंने राजा महेन्द्र प्रताप द्वारा स्थापित 'प्रेम महाविद्यालय', वृन्दावन (उत्तर प्रदेश) में अध्यापन का कार्य पूरी निष्ठापूर्वक किया। शिक्षा सम्बन्धी इन्हीं कार्यों के कारण उनके नाम के साथ सदा के लिए 'आचार्य' शब्द जुड़ गया।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के स्वदेशी, बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा, स्वराज्य, स्वशासन, डोमेनियन स्टेटस, अस्पृश्यता, अहिंसा, प्रेस की स्वतन्त्रता, धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक मूल्यों का महत्व आदि विचारों का भारतीय जनमानस पर व्यापक असर हुआ। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के स्वतन्त्रता सेनानी भी इससे अछूते न रह सके। राष्ट्रीय शिक्षा के प्रचार और प्रसार का कार्य पश्चिमी उत्तर प्रदेश में व्यापक रूप से चल रहा था। इसी क्रम में गुरूकुल कांगड़ी, हरिद्वार, प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन, जामिया मिलिया विश्वविद्यालय, जिसकी स्थापना मोहम्मद अली जौहर ने अलीगढ़ में की थी, जो बाद में दिल्ली लाया गया, देवबंद की दारूल उलूम जैसी संस्थाओं की स्थापना हुई। अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराई का विरोध प्रारम्भ हुआ। किसानों, मजदूरों की समस्याओं को लेकर आन्दोलन हुए। स्वदेशी एवं बहिष्कार का प्रभाव परवर्ती काल में गाँधीवादी आन्दोलनों में भी दिखाई पड़ता है। स्वदेशी और बहिष्कार का प्रयोग गाँधी जी ने अपने आन्दोलनों में बखूबी किया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. डा० के0 के0 शर्माः सहारनपुर संदर्भ, पृ० 1034.
2. वही।
3. डॉ० रणजीत साहा : उत्तर प्रदेश के प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2021, पृ० 43.
4. वही, पृ० 46.
5. वही, पृ० 102.
6. वही।
7. वही, पृ० 184—185.
8. वही, पृ० 190.
9. नूतन महेश्वरीः पंजाब और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आर्य समाज का राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध) पृ० 97.
10. स्वामी श्रद्धानन्द का उत्कृष्ट स्मारक, गुरूकुल कांगड़ी, स्वामी श्रद्धानन्द : एक विलक्षण व्यक्तित्व, पृ० 36.
11. इन्द्र विद्यावाचस्पतिः आर्य समाज का इतिहास, भाग—2, पृ० 109.
12. के० के० शर्मा : सहारनपुर संदर्भ, पृ० 128.
13. सत्याग्रह मूवमेंट, सहारनपुर पुलिस रिपोर्ट, फाइल सं० 263 (27) — 1919.
14. वही (सी०आई०डी० मीमो नं० 3045, इलाहाबाद) 15.4.1919.
15. साक्षात्कारः अजीत प्रसाद जैन द्वारा हरिदेव शर्मा, 6.12.1967 नेहरू मेमोरियल म्यूजिकल लाइब्रेरी, नई दिल्ली, पृ०9.
16. डा० ओमप्रकाश वर्मा : सहारनपुर नगरपालिका, सहारनपुर संदर्भ, पृ० 512.
17. नगरपालिका सहारनपुर : 1868—1968, शताब्दी स्मारिका, पृ० 58.
18. के.के. शर्माः सहारनपुर, सन्दर्भ, उपरोक्त, पृ० 128.
19. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, उपरोक्त, पृ० 7.
20. श्यामलाल कौशिक, जिला सहारनपुर में स्वतन्त्रता संग्राम, पृ० 27.
21. यू0 पी0 पुलिस सीक्रेट एक्सट्रेक्ट, इलाहाबाद, अप्रैल 1919.
22. मदनमोहन मालवीय और महात्मागाँधी के हस्ताक्षर सहित प्रमाण पत्र, जैन अस्पातल विजिटिंग बुक में बाबू विशालचन्द्र जैन, कोर्ट रोड़, सहारनपुर के पास सुरक्षित है।
23. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, उपरोक्त, पृ० 3.
24. श्री नरेन्द्रपाल (नरेन्द्र सदन, बुढ़ाना गेट का पास उपलब्ध पेपर्स)।
25. डॉ० रणजीत साहाः उपरोक्त पृ० 182.

*****